Neutral Citation No. - 2025:AHC-LKO:50332

सुरक्षित

ए.एफ.आर.

न्यायालय संख्या - 10

वाद :- अनुच्छेद 227 के अंतर्गत मामले संख्या - 8432 / 2021

याचिकाकर्ता :- भगवन देवी एवं अन्य

प्रतिवादी :- उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य

याची के अधिवक्ता :- सुशील कुमार सिंह, विजय कुमार त्रिपाठी

प्रतिवादी के अधिवक्ता :- मुख्य स्थायी अधिवक्ता, अभिषेक पाण्डेय, नुज़हत अली सिद्दीकी, श्रवण कुमार

माननीय न्यायमूर्ति रजनीश कुमार

1. याचिकाकर्ताओं की ओर से विद्वान अधिवक्ता श्री सुशील कुमार सिंह, प्रतिवादी संख्या-2 की ओर से विद्वान अधिवक्ता श्री श्रवण कुमार तथा राज्य की ओर से विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता को सुना गया।

आपराधिक अपील संख्या - 465/2013
मोहम्मद सलीम खान बनाम उत्तर प्रदेश राज्य

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

Translated Version. Not for Legal Use.

2. संविधान के अनुच्छेद 227 के अन्तर्गत प्रस्तुत वर्तमान याचिका, सत्र न्यायाधीश, अम्बेडकर नगर द्वारा आपराधिक पुनरीक्षण संख्या-45 वर्ष 2020 (भगवान देवी एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य) में पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 08.03.2021 तथा मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, अम्बेडकर नगर द्वारा आपराधिक वाद संख्या-4610 वर्ष 2019 (राज्य बनाम भगवान देवी एवं अन्य), जो कि मुकदमा अपराध संख्या-258/2016, धारा 419, 420, 467, 468 एवं 471 भा०द०वि०, थाना कोतवाली टाण्डा, जनपद अम्बेडकर नगर से उद्भूत है, में पारित आदेश दिनांक 19.02.2020 को अपास्त किए जाने के प्रयोजन से दायर की गई है, जिसके द्वारा याचिकाकर्ताओं द्वारा द०प्र०स०, 1973 (एतद्पश्चात द०प्र०स० के रूप में संदर्भित) की धारा 239 के अन्तर्गत प्रस्तुत प्रार्थना-पत्र को निरस्त कर दिया गया है।

3. याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याचिकाकर्ताओं एवं प्रतिवादी संख्या-2 के मध्य विद्यमान एक दीवानी विवाद को आपराधिक स्वरूप प्रदान कर दिया गया है। प्रतिवादी संख्या-2 द्वारा, याचिकाकर्ता संख्या-1 के पक्ष में याचिकाकर्ता संख्या-1 के पति तथा प्रतिवादी संख्या-2 के पति द्वारा निष्पादित वसीयत के निरस्तीकरण हेतु पूर्व में ही एक दीवानी वाद दायर किया जा चुका है, जो दीवानी न्यायालय में लंबित है; अतः दीवानी वाद की लंबितता के दौरान आपराधिक कार्यवाही आरम्भ नहीं की जा सकती थी।

4. आगे यह भी निवेदन किया गया कि याचिकाकर्ता संख्या-1 के पक्ष में निष्पादित पंजीकृत वसीयत के आधार पर याचिकाकर्ता संख्या-1 का नाम राजस्व अभिलेखों में दाखिल-खारिज कर दिया गया है। यह भी निवेदन किया गया कि प्राथमिकी दर्ज कराए जाने हेतु दिए गए आवेदन में तथा स्वयं प्राथमिकी में महत्वपूर्ण तथ्यों का छिपाव किया गया है,

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

Translated Version. Not for Legal Use.

क्योंकि याचिकाकर्ता संख्या-1 के पक्ष में दीवानी वाद के दायर किए जाने तथा नामांतरण की तथ्यात्मक स्थिति का प्रकटीकरण नहीं किया गया; अन्यथा प्रतिवादी संख्या-2 का कथन दीवानी वाद तथा प्राथमिकी–दोनों में समान है।

5. आगे यह भी निवेदन किया गया कि याचिकाकर्ता संख्या-1 के पक्ष में नामांतरण, अवसर प्रदान किए जाने तथा वसीयत के साक्षियों के कथन अभिलेखित किए जाने के उपरान्त किया गया था। नामांतरण कार्यवाही में पारित आदेश को चुनौती नहीं दी गई है। यह भी निवेदन किया गया कि वसीयत केवल जनपद अम्बेडकर नगर के टाण्डा स्थित कृषि संपत्तियों के संबंध में है तथा स्व० सन्तराम ने दिल्ली स्थित संपत्तियाँ प्रतिवादी संख्या-2 को प्रदान की थीं। आगे यह भी कहा गया कि याचिकाकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत उन्मोचन प्रार्थना-पत्र को विद्वान विचारण न्यायालय ने उसमें उल्लिखित आधारों पर विचार किए बिना निरस्त कर दिया तथा विद्वान पुनरीक्षण न्यायालय ने भी याचिकाकर्ताओं द्वारा उठाए गए आधारों पर विचार किए बिना पुनरीक्षण निरस्त कर दिया; अतः विद्वान विचारण न्यायालय तथा विद्वान पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा पारित आदेशों को चुनौती देते हुए वर्तमान याचिका प्रस्तुत की गई है। यह भी निवेदन किया गया कि आक्षेपित आदेशों सहित आपराधिक वाद की समस्त कार्यवाही अपास्त किए जाने योग्य है।

6. याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **नरेश कुमार एवं अन्य बनाम कर्नाटक राज्य एवं अन्य; (2024) एस०सी०सी० ऑनलाइन एस०सी० 268, जित विनायक अरोळकर बनाम गोवा राज्य एवं अन्य; (2025) एस०सी०सी० ऑनलाइन एस०सी० 31 तथा विष्णु कुमार शुक्ला एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य; 2023 लाइव लॉ (सर्वोच्च न्यायालय) 1019** में पारित निर्णयों पर भरोसा किया।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

7. इसके विपरीत, प्रतिवादी संख्या-2 के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा पारित आदेशों को चुनौती देते हुए संविधान के अनुच्छेद 227 के अन्तर्गत प्रस्तुत यह याचिका पोषणीय नहीं है। यह भी निवेदन किया गया कि आक्षेपित आदेश सही एवं विधिसम्मत रूप से पारित किए गए हैं; अतः आक्षेपित आदेशों के विरुद्ध कुछ भी इंगित नहीं किया जा सकता।

8. आगे यह भी निवेदन किया गया कि वसीयत विलेख का पंजीकरण, अभियुक्तों अर्थात् याचिकाकर्ताओं द्वारा किए गए आपराधिक कृत्यों के संबंध में प्राथमिकी दर्ज कराए जाने में कोई बाधा नहीं है। यह भी कहा गया कि हिन्दू विधि में दूसरी पत्नी को मान्यता प्राप्त नहीं है; अतः याचिकाकर्ताओं के नाम राजस्व अभिलेखों में नामांतरित नहीं किए जा सकते थे। यह भी निवेदन किया गया कि वसीयत में प्रतिवादी संख्या-2 के किसी कृत्य का प्रकटीकरण नहीं है। आगे यह भी कहा गया कि याचिकाकर्ताओं के उन्मोचन हेतु कोई आधार नहीं बनता तथा अभियोजन द्वारा अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है, जिसके आधार पर याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध आरोप विरचित किए जा सकते हैं। अतः आक्षेपित आदेश विधिसम्मत रूप से पारित किए गए हैं तथा यह याचिका भ्रांत एवं निराधार आधारों पर प्रस्तुत की गई है, जो निरस्त किए जाने योग्य है।

9. उन्होंने माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **राधे श्याम एवं अन्य बनाम छब्बी नाथ एवं अन्य; 2015 लॉसूट (सर्वोच्च न्यायालय) 190** तथा **राजस्थान राज्य बनाम फतेहकरण मेहदू; (2017) 3 एस०सी०सी० 198** के वादों में पारित निर्णयों पर भरोसा किया।

10. राज्य की ओर से विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने भी याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता के तर्कों का प्रबल विरोध करते हुए निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

विधि के अनुरूप पारित किए गए हैं तथा उनमें ऐसी कोई अवैधता अथवा त्रुटि नहीं है, जिससे इस न्यायालय द्वारा किसी प्रकार के हस्तक्षेप की आवश्यकता हो। यह याचिका भ्रांत है तथा इसमें कोई गुण नहीं है; अतः यह निरस्त किए जाने योग्य है।

11. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत तर्कों पर विचार किया तथा अभिलेख का अवलोकन किया।

12. प्रतिवादी संख्या-2 ने दिनांक 07.10.2015 को याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध प्राथमिकी दर्ज कराए जाने हेतु द०प्र०स० की धारा 156(3) के अन्तर्गत एक प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत किया तथा मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, अम्बेडकर नगर द्वारा पारित आदेश के अनुपालन में, दिनांक 10.11.2016 को थाना कोतवाली टाण्डा, जनपद अम्बेडकर नगर में मुकदमा अपराध संख्या-258/2016, धारा 419, 420, 467, 468 एवं 471 भा०द०वि० के अन्तर्गत प्राथमिकी दर्ज की गई। प्राथमिकी में यह आरोप अंकित है कि परिवादी कमला देवी पत्नी स्व० सन्तराम ग्राम अजमेरी बादशाहपुर, थाना कोतवाली टाण्डा, जनपद अम्बेडकर नगर की निवासी हैं तथा सन्तराम की विवाहिता पत्नी हैं। सन्तराम एवं कमला देवी के एक पुत्र रोहित तथा एक पुत्री दीपा हैं। परिवादी के पति सन्तराम सतर्कता आयोग में उप सचिव के पद पर कार्यरत थे तथा दिल्ली में तैनात थे। भगवन देवी पत्नी प्रेमचन्द तथा संगीता पुत्री प्रेमचन्द ने छल-कपट करते हुए, षड्यंत्र रचकर तथा परिवादी के पति सन्तराम की करोड़ों रुपये की संपत्तियों को हड़पने के आशय से, दिनांक 11.12.2008 को परिवार रजिस्टर में अपने नाम दर्ज करा लिए तथा दिनांक 01.11.2008 को तहसील टाण्डा में स्व० सन्तराम से कपटपूर्वक एक कूटरचित विक्रय विलेख तैयार कराकर भगवन देवी के नाम निष्पादित करा लिया। भगवन देवी एवं संगीता, जो स्वभाव से षड्यंत्रकारी हैं, द्वारा इसी प्रकार की घटना प्रेमचन्द के पुत्र संजय के साथ भी की गई है। परिवादी कमला देवी को इस तथ्य की जानकारी तब हुई जब

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

Translated Version, Not for Legal Use.

याचिकाकर्ताओं द्वारा ग्राम अजमेरी बादशाहपुर, थाना कोतवाली टाण्डा स्थित उसके घर पर कब्जा किया जाने लगा। तत्पश्चात वह थाना कोतवाली टाण्डा पहुँची और प्रार्थना-पत्र दिया, किन्तु थाना प्रभारी द्वारा भगवन देवी से मिलीभगत कर कोई कार्यवाही नहीं की गई; इसके उपरान्त उसने पुलिस अधीक्षक, अम्बेडकर नगर के समक्ष भी प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत किया, परन्तु वहाँ भी कोई कार्यवाही नहीं हुई, जिससे विवश होकर उसने द०प्र०स० की धारा 156(3) के अन्तर्गत आवेदन प्रस्तुत किया।

13. उपर्युक्त प्राथमिकी के अनुसरण में पुलिस द्वारा विवेचना उपरान्त दिनांक 06.02.2017 को अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत की गई, जिसमें यह अभिलिखित किया गया कि कथनों एवं दस्तावेजी साक्ष्य के आधार पर कोई अपराध सिद्ध नहीं होता है तथा साक्षियों के कथनों से यह तथ्य प्रकाश में आया है कि परिवादी के पति स्व० सन्तराम ने अपने जीवनकाल में अपनी दूसरी पत्नी भगवन देवी के पक्ष में एक विक्रय विलेख निष्पादित किया था तथा उसे पंजीकृत भी कराया था, तथा पेशबंदी के रूप में प्रतिवादी के विरुद्ध एक मिथ्या मुकदमा पंजीकृत कराया गया है।

14. प्रतिवादी संख्या-2 द्वारा यह आरोप लगाते हुए अभ्यापत्ति-प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत किया गया कि अंतिम रिपोर्ट बिना किसी कथन को अभिलेखित किए तथा उसके द्वारा उपलब्ध कराए गए साक्ष्यों पर विचार किए बिना प्रस्तुत की गई है। विद्वान मजिस्ट्रेट ने दिनांक 10.02.2018 के आदेश द्वारा अभ्यापत्ति-प्रार्थना-पत्र स्वीकार करते हुए अंतिम रिपोर्ट संख्या-05/2017 को अस्वीकृत कर दिया, संज्ञान लिया तथा यह अभिनिर्धारित किया कि वाद राज्य वाद के रूप में चलेगा और तदनुसार समन जारी किए। दिनांक 10.02.2018 के उक्त आदेश को याचिकाकर्ताओं द्वारा आपराधिक पुनरीक्षण संख्या-37 वर्ष 2019 में चुनौती दी गई, जिसे विद्वान सत्र न्यायाधीश, अम्बेडकर नगर द्वारा दिनांक 02.11.2019 के आदेश से निरस्त

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

कर दिया गया तथा विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 10.02.2018 के आदेश की पुष्टि की गई। परिणामस्वरूप याचिकाकर्ताओं ने द०प्र०स० की धारा 482/378/407 के अन्तर्गत आवेदन संख्या-154 वर्ष 2020 (श्रीमती भगवन देवी एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य) द्वारा इस न्यायालय का द्वार खटखटाया, किन्तु कुछ विस्तार से तर्क प्रस्तुत किए जाने के पश्चात याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता द्वारा संबंधित न्यायालय के समक्ष उन्मोचन प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत करने की स्वतंत्रता प्राप्त करते हुए उक्त आवेदन का निस्तारण करा लिया गया। उक्त आदेश के अनुपालन में याचिकाकर्ताओं द्वारा दिनांक 18.01.2020 को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, अम्बेडकर नगर के समक्ष द०प्र०स० की धारा 239 के अन्तर्गत एक प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत किया गया, जिसे दिनांक 19.02.2020 के आदेश द्वारा निरस्त कर दिया गया। उक्त आदेश के विरुद्ध याचिकाकर्ताओं द्वारा आपराधिक पुनरीक्षण संख्या-45 वर्ष 2020 प्रस्तुत किया गया, जिसे भी दिनांक 08.03.2021 के आदेश द्वारा निरस्त कर दिया गया। अतः इन दोनों आदेशों को चुनौती देते हुए वर्तमान याचिका प्रस्तुत की गई है।

15. प्रतिवादी संख्या-2 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह आपत्ति उठाई गई कि संविधान के अनुच्छेद 227 के अन्तर्गत प्रस्तुत यह याचिका पोषणीय नहीं है। इस संदर्भ में उन्होंने माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **राधे श्याम एवं अन्य बनाम छब्बी नाथ एवं अन्य (उपरोक्त)** के वाद में दिए गए निर्णय पर भरोसा किया है। उक्त निर्णय में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने, दो माननीय न्यायाधीशों द्वारा किए गए संदर्भ पर विचार करते हुए, यह अभिनिर्धारित किया है कि दीवानी न्यायालयों द्वारा पारित न्यायिक आदेश संविधान के अनुच्छेद 226 के अन्तर्गत रिट अधिकारिता के अधीन नहीं आते तथा संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन अधिकारिता, अनुच्छेद 226 के अधीन अधिकारिता से पृथक है। संदर्भ के

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

Translated Version. Not for Legal Use.

बिंदुओं में से एक यह था कि संविधान के अनुच्छेद 227 के अन्तर्गत उच्च न्यायालय द्वारा उत्प्रेषण रिट जारी नहीं की जाती। संविधान का अनुच्छेद 227 उच्च न्यायालयों को पर्यवेक्षण की शक्ति प्रदान करता है, जिसका प्रयोग अत्यन्त विरल रूप से किया जाना है, जिससे अधिकरणों एवं न्यायालयों को उनकी अधिकार-सीमा के भीतर रखा जा सके। अनुच्छेद 227 के अन्तर्गत दीवानी एवं आपराधिक–दोनों प्रकार के न्यायालयों के आदेशों की जाँच केवल अत्यन्त असाधारण मामलों में ही की जा सकती है, जब न्याय का प्रत्यक्ष अपह्रास हुआ हो। तथापि, इस शक्ति का प्रयोग तथ्य अथवा विधि की त्रुटि को सुधारने के लिए नहीं किया जाना है।

16. उपर्युक्त के दृष्टिगत, विषय के संदर्भण के समय माननीय सर्वोच्च न्यायालय की माननीय खण्डपीठ ने यह अवलोकन किया कि संविधान के अनुच्छेद 227 के अन्तर्गत दीवानी एवं आपराधिक–दोनों प्रकार के न्यायालयों के आदेशों की जाँच केवल अत्यन्त अपवादात्मक परिस्थितियों में ही की जा सकती है, जब न्याय का प्रत्यक्ष अपह्रास घटित हुआ हो।

17. द०प्र०स० की धारा 482 के अन्तर्गत निहित शक्तियों का प्रयोग यह न्यायालय न्याय के प्रशासन के दौरान उचित करने तथा अनुचित को दूर करने के लिए कर सकता है। संविधान के अनुच्छेद 227 के अन्तर्गत पर्यवेक्षण की शक्ति उच्च न्यायालय को प्रदान की गई है, जिसे किसी भी समय प्रवर्तित किया जा सकता है, यदि उच्च न्यायालय यह समाधान करता है कि ऐसा करना आवश्यक है; तथा यह न्यायालय तब हस्तक्षेप कर सकता है, जब विधि की कोई ऐसी त्रुटि अभिलेख के मुख पर स्पष्ट हो, जिसके परिणामस्वरूप घोर अन्याय उत्पन्न हुआ हो। अतः, न्यायहित में गलत अथवा अवैधता को दूर करने के लिए इस न्यायालय द्वारा दोनों शक्तियों का प्रयोग किया जा सकता है।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

Translated Version: Not for Legal Use.

18. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **एशियन रिसर्फेसिंग ऑफ रोड एजेंसी प्राइवेट लिमिटेड बनाम केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो;(2018) 16 एससीसी 299,** के वाद में यह अभिनिर्धारित किया है कि आरोप विरचित करने का आदेश शुद्ध रूप से अन्तरिम आदेश नहीं माना जा सकता तथा उपयुक्त परिस्थितियों में उसमें द०प्र०स० की धारा 397(2) अथवा धारा 482 के अन्तर्गत अथवा संविधान के अनुच्छेद 227–जो कि एक संवैधानिक उपबंध है–के अन्तर्गत हस्तक्षेप किया जा सकता है।

19. विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश के माध्यम से, उन्मोचन हेतु प्रस्तुत प्रार्थना-पत्र को निरस्त करते हुए आरोप विरचित करने का निर्णय लिया गया तथा आरोप विरचित किए जाने हेतु वाद नियत किया गया तथा पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा भी उसी की पुष्टि करते हुए पुनरीक्षण निरस्त कर दिया गया। अतः माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित उपर्युक्त विधिक प्रतिवेदनों के दृष्टिगत, केवल इस आधार पर कि द०प्र०स० की धारा 482 के अन्तर्गत उपाय उपलब्ध है, संविधान के अनुच्छेद 227 के अन्तर्गत प्रस्तुत वर्तमान याचिका को अपोषणीय नहीं कहा जा सकता, क्योंकि संविधान के अनुच्छेद 227 के अन्तर्गत यह न्यायालय दीवानी एवं आपराधिक–दोनों मामलों में शक्तियों का प्रयोग कर सकता है तथा प्रत्येक उपबंध के अन्तर्गत यह न्यायालय क्रमशः जनपद न्यायालयों पर अंतर्निहित अधिकारिता तथा न्यायालयों एवं अधिकरणों पर पर्यवेक्षण की शक्ति का प्रयोग करते हुए उनके द्वारा किए गए गलत को सुधारता है। यह भी दृष्टिगोचर है कि यह याचिका वर्ष 2021 में प्रस्तुत की गई थी तथा इस न्यायालय द्वारा इसे ग्रहण करते हुए दिनांक 15.06.2021 को अंतरिम आदेश भी पारित किया गया था; अतः मात्र इस आधार पर, प्रतिज्ञापत्रों के आदान-प्रदान के पश्चात इस स्तर पर याचिका को निरस्त किया

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

जाना इस न्यायालय को उपयुक्त प्रतीत नहीं होता, क्योंकि दोनों शक्तियों का प्रयोग इस न्यायालय द्वारा किया जाना है।

20. याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता का मुख्य तर्क यह है कि एक दीवानी विवाद को आपराधिक स्वरूप प्रदान कर दिया गया है। तथापि, पक्षकारों के मध्य विद्यमान दीवानी विवाद के कारण प्रत्येक आपराधिक वाद की कार्यवाही को अपास्त नहीं किया जा सकता, क्योंकि यदि दीवानी वाद के पक्षकार अथवा पक्षकारों के विरुद्ध आपराधिक विधि के अधीन दण्डनीय अपराध बनते हैं, तो अभियोजन पर कोई निषेध नहीं है तथा दोनों कार्यवाहियों का एक साथ जारी रहना भी निषिद्ध नहीं है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने हाल के निर्णय में **कथ्यायिनी बनाम सिद्धार्थ पी० एस० रेड्डी एवं अन्य; (2025) SCC ऑनलाइन SC 1428** के वाद में यह अभिनिर्धारित किया है कि यदि दीवानी वाद के पक्षकारों के विरुद्ध आपराधिक विधि के अधीन दण्डनीय अपराध बनते हैं, तो अभियोजन पर कोई निषेध नहीं है तथा समान विषयवस्तु एवं समान पक्षकारों से संबंधित दीवानी कार्यवाही की लंबितता, यदि अभियुक्तों के विरुद्ध प्रथमदृष्टया मामला विद्यमान है, तो आपराधिक कार्यवाही को अपास्त किए जाने का औचित्य नहीं बनती। उक्त निर्णय के अनुच्छेद 19 से 23 का प्रासंगिक अंश निम्नवत् उद्धृत है:-

> *"**19.** अब हम दीवानी वाद की लंबितता के दौरान अभियोजन पर निषेध के प्रश्न पर आते हैं। हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि यदि दीवानी वाद के पक्षकारों के विरुद्ध आपराधिक विधि के अधीन दण्डनीय अपराध बनते हैं, तो अभियोजन पर ऐसा कोई निषेध विद्यमान नहीं है। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता डॉ० मेनका गुरुस्वामी द्वारा उपर्युक्त निवेदन के समर्थन में समुचित न्यायिक दृष्टांतों का सही रूप से उल्लेख किया गया है। के० जगदीश बनाम उदय*

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

कुमार जी० एस० एवं अन्य के वाद में, इस न्यायालय ने अपने पूर्व निर्णयों की समीक्षा करते हुए विधिक स्थिति को स्पष्ट किया है। उक्त निर्णय का प्रासंगिक अनुच्छेद निम्नवत् उद्धृत है:

> *"8. यह भली-भाँति स्थापित है कि कुछ मामलों में तथ्यों का वही समूह दीवानी तथा आपराधिक–दोनों प्रकार की कार्यवाहियों में उपाय उत्पन्न कर सकता है और भले ही किसी पक्षकार द्वारा दीवानी उपाय ग्रहण कर लिया गया हो, तथापि वह आपराधिक विधि के अन्तर्गत कार्यवाही प्रवर्तित करने से वंचित नहीं होता।"*

20. *प्रतिभा रानी बनाम सूरज कुमार एवं अन्य के वाद में इस न्यायालय ने दोनों उपायों के मध्य भेद को निम्नवत् संक्षेपित किया है–*

> *"21. ... ऐसे अनेक वाद हैं जिनमें आपराधिक विधि एवं दीवानी विधि साथ-साथ प्रवर्तित हो सकती हैं। दोनों उपाय परस्पर बहिष्कृत नहीं हैं, अपितु स्पष्टतः सह-विस्तारी हैं तथा अपने विषयवस्तु एवं परिणाम में मूलतः भिन्न हैं। आपराधिक विधि का उद्देश्य उस अपराधी को दण्डित करना है, जो व्यक्ति, संपत्ति अथवा राज्य के विरुद्ध अपराध करता है, जिसके लिए अभियुक्त, अपराध सिद्ध होने पर, अपनी स्वतंत्रता से वंचित किया जाता है और कुछ मामलों में उसके प्राणों से भी। तथापि, इससे दीवानी उपायों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, जैसे आगजनी, दुर्घटनाओं आदि के मामलों में दोषी के विरुद्ध वाद प्रस्तुत करना। यह मान लेना*

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

कि जहाँ दीवानी उपाय उपलब्ध है, वहाँ आपराधिक अभियोजन पूर्णतः वर्जित हो जाता है, पूर्णतः अस्वीकार्य है। दोनों प्रकार की कार्यवाहियाँ अपनी विषयवस्तु, क्षेत्राधिकार एवं प्रभाव में पूर्णतः भिन्न हैं। यह मानना हमें सर्वथा असंगत प्रतीत होता है कि यदि पति अपनी पत्नी के स्त्रीधन का कपटपूर्वक दुर्विनियोग करता है, भले ही वह उसकी अभिरक्षा में हो, तो इससे भा०द०वि० की धारा 406 के अन्तर्गत अभियोजन बाधित हो जाएगा अथवा भा०द०वि० की धारा 405 के अवयव निष्प्रभावी अथवा निष्फल हो जाएँगे। यह कहना कि विवाहित महिला का स्त्रीधन उसके पति की अभिरक्षा में होने के कारण उसके विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं की जा सकती क्योंकि कोई अपराध घटित नहीं हुआ है, विधि के वास्तविक आशय को निष्प्रभावी एवं विकृत करने के समान है।"

21. *उपर्युक्त दृष्टिकोण को कमलादेवी अग्रवाल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य एवं अन्य के वाद में पुनः दोहराया गया–*

"17. उपर्युक्त के विपरीत प्रचुर न्यायिक प्राधिकरणों के आलोक में हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि उच्च न्यायालय द्वारा अपीलकर्ता द्वारा प्रतिवादियों के विरुद्ध आरम्भ की गई कार्यवाही को अपास्त किया जाना उचित नहीं था। हम इस तर्क से भी प्रभावित नहीं हैं कि उच्च न्यायालय में दीवानी वाद लंबित होने के कारण मजिस्ट्रेट विधि अथवा औचित्य के आधार पर आपराधिक वाद को आगे नहीं बढ़ा सकता था। आपराधिक वादों का निस्तारण दण्ड प्रक्रिया

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

संहिता के अधीन विनिर्दिष्ट प्रक्रिया के अनुसार किया जाना है तथा किसी भिन्न न्यायालय में, भले ही वह पद एवं अधिकारिता में उच्च हो, दीवानी कार्यवाही की लंबितता को आपराधिक कार्यवाही को अपास्त करने का आधार नहीं बनाया जा सकता।"

22. *उपर्युक्त वादों का सर्वेक्षण करने के पश्चात, इस न्यायालय ने के० जगदीश (उपरोक्त) के वाद में उच्च न्यायालय द्वारा आपराधिक कार्यवाही को अपास्त किए जाने के निष्कर्ष को निरस्त कर दिया तथा यह अभिनिर्धारित किया कि आपराधिक कार्यवाही अपने तार्किक अंत तक जारी रहेगी।*

23. *इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित उपर्युक्त दृष्टांत यह पूर्णतः स्पष्ट कर देते हैं कि समान विषयवस्तु तथा समान पक्षकारों से संबंधित दीवानी कार्यवाहियों की लंबितता, अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध प्रथमदृष्टया मामला विद्यमान होने की स्थिति में, आपराधिक कार्यवाही को अपास्त किए जाने का औचित्य नहीं बनती। वर्तमान वाद में निस्संदेह प्रतिवादियों के विरुद्ध ऐसा प्रथमदृष्टया मामला विद्यमान है। के० जी० येल्लप्पा रेड्डी की पुत्रियों को अपवर्जित करते हुए परिवार वृक्ष के सृजन से लेकर, केवल के० जी० येल्लप्पा रेड्डी के पुत्रों एवं पौत्रों के मध्य विभाजन विलेख निष्पादित किए जाने तथा प्रतिवादियों के मध्य प्रतिकर पुरस्कार के वितरण तक की घटनाओं की दीर्घ शृंखला पर विचार करने से यह निष्कर्ष निकालने के लिए पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है कि संबंधित भूमि से लाभ प्राप्त करने हेतु प्रतिवादियों द्वारा सक्रिय प्रयास किए गए। उपर्युक्त घटनाक्रम के प्रकटीकरण पर अपीलकर्ता एवं उसकी बहनों को कथित रूप से दी गई धमकी, प्रतिवादियों के उद्देश्य की और अधिक पुष्टि करती है। उपर्युक्त*

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

समस्त कारक यह इंगित करते हैं कि अपीलकर्ता को न्याय सुनिश्चित किए जाने हेतु आपराधिक विचारण आवश्यक है।

21. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **नरेश कुमार एवं अन्य बनाम कर्नाटक राज्य एवं अन्य (उपरोक्त)** के वाद में, जिस पर याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने भरोसा किया है, **परमजीत बत्रा बनाम उत्तराखण्ड राज्य; (2013) 11 एससीसी 673** के निर्णय पर आश्रित रहते हुए यह अभिनिर्धारित किया है कि परिवाद में वर्णित दीवानी लेन-देन में भी आपराधिक स्वरूप विद्यमान हो सकता है; किन्तु उच्च न्यायालय को यह परीक्षण करना आवश्यक है कि क्या मूलतः दीवानी प्रकृति के विवाद को आपराधिक अपराध का आवरण प्रदान किया गया है। उक्त वाद में यह पाया गया कि पक्षकारों के मध्य विवाद न केवल मूलतः दीवानी प्रकृति का था, बल्कि बाद में वही विवाद पक्षकारों द्वारा निस्तारित भी कर लिया गया था।

22. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **जित विनायक अरोळकर बनाम गोवा राज्य एवं अन्य (उपरोक्त)** के वाद में यह पाया कि परिवाद को यथावत् सत्य मान लिए जाने पर भी, अपीलकर्ता के विरुद्ध भा०द०वि० की धारा 415 के अन्तर्गत छल का अपराध सिद्ध नहीं होता। इसके अतिरिक्त, चौथे प्रतिवादी द्वारा दीवानी वाद संस्थित किए जाने की तिथि से दो वर्ष के पश्चात प्रथम बार परिवाद प्रस्तुत किया गया था तथा परिवाद में इस तथ्य का दमन किया गया था कि दीवानी वाद पूर्व में ही दायर किए जा चुके थे, जिनमें अस्थायी निषेधाज्ञा हेतु प्रार्थना-पत्र भी प्रस्तुत किए गए थे। जब स्वामित्व के संबंध में विवाद विद्यमान था, तब चौथे प्रतिवादी द्वारा दीवानी वाद दायर किए जाने के दो वर्ष पश्चात आपराधिक विधि को प्रवर्तित करना विधिक प्रक्रिया के दुरुपयोग के अतिरिक्त कुछ नहीं है।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

23. उपर्युक्त के दृष्टिगत यह स्पष्ट है कि यदि विवाद मूलतः शुद्ध रूप से दीवानी प्रकृति का हो तथा अभियुक्त के विरुद्ध कोई आपराधिक अपराध न बनता हो, तो ऐसे वाद में आपराधिक कार्यवाही को जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती और वह अपास्त किए जाने योग्य है; तथा जहाँ मूलतः दीवानी विवाद में दीवानी कार्यवाहियाँ संस्थित एवं लंबित हों और उन्हें आपराधिक कार्यवाही संस्थित करते समय प्रकट न किया गया हो, तब भी प्रत्येक वाद के तथ्यों एवं परिस्थितियों के आधार पर परीक्षण किया जाना आवश्यक है और मात्र इस आधार पर कि दीवानी विवाद विद्यमान है अथवा दीवानी कार्यवाहियाँ लंबित हैं, आपराधिक अभियोजन को अपास्त नहीं किया जा सकता।

24. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **विष्णु कुमार शुक्ला एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य (उपरोक्त)** के वाद में यह अभिनिर्धारित किया है कि तंग करने वाले एवं अवांछित अभियोजन से संरक्षण प्रदान करना तथा अभियुक्त को अनावश्यक रूप से विचारण में घसीटे जाने से बचाना–चाहे वह प्राथमिकी अथवा परिवाद को अपास्त करके हो, अथवा उन्मोचन निरस्त किए जाने के आदेश के विरुद्ध अपील स्वीकार करके हो, अथवा किसी अन्य विधिसम्मत माध्यम से–उपयुक्त मामलों में उच्च न्यायालयों पर आरोपित एक कर्तव्य है।

25. वर्तमान वाद के तथ्यों की ओर दृष्टिपात करने पर यह स्पष्ट होता है कि दिनांक 10.11.2016 को प्राथमिकी दर्ज की गई, जिसमें यह आरोप अंकित है कि प्रतिवादी संख्या-2 के पति की मृत्यु के उपरान्त, जब याचिकाकर्ताओं द्वारा उसके आवास पर कब्जा किया जाने लगा, तब उसे यह जानकारी हुई कि दिनांक 11.12.2008 को परिवार रजिस्टर में याचिकाकर्ताओं के नाम सम्मिलित कर दिए गए थे तथा दिनांक 01.11.2008 को याचिकाकर्ता संख्या-1 के पक्ष में वसीयत निष्पादित की गई थी, जबकि याचिकाकर्ता संख्या-1 प्रेमचन्द की पत्नी है तथा याचिकाकर्ता संख्या-2 प्रेमचन्द की पुत्री है, और याचिकाकर्ता

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

संख्या-1 द्वारा दिल्ली में उसके पुत्र के साथ भी छल किया गया था। इसके अतिरिक्त, याचिकाकर्ताओं द्वारा विक्रय विलेख के निरस्तीकरण हेतु दिनांक 23.09.2015 को सिविल जज (जूनियर डिवीजन), अम्बेडकर नगर के न्यायालय में एक दीवानी वाद भी प्रस्तुत किया गया है।

26. जहाँ तक याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह आपत्ति उठाई गई है कि प्राथमिकी दर्ज कराते समय विक्रय विलेख के निरस्तीकरण हेतु दीवानी वाद दायर किए जाने के तथ्य का प्रकटीकरण नहीं किया गया, इस संबंध में प्रतिवादी संख्या-2 ने प्रतिज्ञापत्र में स्पष्ट किया है कि जब उसे यह ज्ञात हुआ कि याचिकाकर्ता संख्या-1 द्वारा उसके पति स्व० सन्तराम के नाम पर कूटरचित दस्तावेज तैयार कर उसके विरुद्ध छल किया गया है, तब उसने इस विषय में सर्वप्रथम पुलिस अधिकारियों के समक्ष परिवाद प्रस्तुत किया; किन्तु जब याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध उसकी प्राथमिकी दर्ज नहीं की गई, तब उसने प्राथमिकी दर्ज कराए जाने हेतु द०प्र०स० की धारा 156(3) के अन्तर्गत प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत किया, जिसके परिणामस्वरूप याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध प्राथमिकी दर्ज की गई। यह भी अभिलिखित किया गया है कि उसे कथित वसीयत विलेख के कूटरचित होने के कारण उसके निरस्तीकरण हेतु नियमित वाद संख्या-461/2015, विद्वान सिविल जज (जूनियर डिवीजन), टाण्डा, जनपद अम्बेडकर नगर के न्यायालय में दायर करने की भी सलाह दी गई थी। प्राथमिकी से यह भी उद्घाटित होता है कि प्रतिवादी संख्या-2 ने सर्वप्रथम थाना जाकर प्राथमिकी दर्ज कराए जाने का प्रयास किया, किन्तु प्राथमिकी दर्ज न होने पर उसने पुलिस अधीक्षक, अम्बेडकर नगर के समक्ष भी प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत किया, परन्तु वहाँ भी कोई कार्यवाही नहीं की गई; परिणामस्वरूप वह विवश होकर दिनांक 07.10.2015 को न्यायालय की शरण में गई और प्राथमिकी दर्ज कराए जाने हेतु आवेदन प्रस्तुत किया। अतः यह स्पष्ट है कि प्रतिवादी

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

संख्या-2 द्वारा दोनों कार्यवाहियाँ–दीवानी तथा आपराधिक–एक साथ संस्थित करने हेतु प्रयास किए गए थे; तथापि, संबंधित थाना एवं पुलिस अधीक्षक, अम्बेडकर नगर के समक्ष जाने में समय व्यतीत हो जाने के कारण, वसीयत विलेख के निरस्तीकरण हेतु दीवानी वाद दायर किए जाने के उपरान्त प्राथमिकी हेतु आवेदन प्रस्तुत किया जा सका। इस प्रकार, दीवानी वाद दायर किए जाने के पश्चात प्राथमिकी दर्ज कराए जाने में हुई विलम्बता तथा उसके अप्रकटीकरण का कारण समुचित रूप से स्पष्ट कर दिया गया है। इसके अतिरिक्त, वर्तमान याचिका याचिकाकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत उन्मोचन प्रार्थना-पत्र पर पारित आदेश तथा उस आदेश की पुष्टि में पारित पुनरीक्षण आदेश को चुनौती देते हुए दायर की गई है।

27. याचिकाकर्ताओं द्वारा पूर्व में द०प्र०स० की धारा 482 के अन्तर्गत एक आवेदन प्रस्तुत कर, थाना टाण्डा, जनपद अम्बेडकर नगर में पंजीकृत मुकदमा अपराध संख्या-0258/2016, धारा 419, 420, 467, 468 एवं 471 भा०द०वि० से उद्भूत सम्पूर्ण कार्यवाही के साथ-साथ विद्वान सिविल जज (जूनियर डिवीजन)/न्यायिक मजिस्ट्रेट, अम्बेडकर नगर द्वारा पारित आदेश दिनांक 10.02.2018, विद्वान सत्र न्यायाधीश, अम्बेडकर नगर द्वारा पारित आदेश दिनांक 02.11.2019 तथा मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, अम्बेडकर नगर द्वारा पारित आदेश दिनांक 25.11.2019, जिसके द्वारा याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध जमानती वारंट निर्गत किए गए थे, को अपास्त किए जाने की प्रार्थना की गई थी; तथापि, कुछ विस्तार से तर्क प्रस्तुत किए जाने के पश्चात याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता द्वारा स्वयं उक्त आवेदन को द०प्र०स० के उपबंधों के अनुरूप संबंधित विचारण न्यायालय के समक्ष प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत करने की स्वतंत्रता के साथ निस्तारित करा लिया गया, जिसे विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा विचारित एवं निर्णीत किए जाने का निर्देश दिया गया था। इस प्रकार, उपर्युक्त आधारों पर उन्हीं आदेशों तथा सम्पूर्ण आपराधिक कार्यवाही को चुनौती देना आगे

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

नहीं बढ़ाया गया तथा याचिकाकर्ताओं द्वारा उपयुक्त विधिक उपाय ग्रहण करने की स्वतंत्रता के साथ उक्त आवेदन निस्तारित करा लिया गया। तत्पश्चात, याचिकाकर्ताओं द्वारा दिनांक 18.01.2020 को द०प्र०स० की धारा 239 के अन्तर्गत उन्मोचन प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत किया गया तथा वर्तमान याचिका में उक्त प्रार्थना-पत्र पर पारित आदेश एवं उस आदेश को चुनौती देते हुए प्रस्तुत पुनरीक्षण में पारित आदेश को चुनौती दी गई है; अतः इस याचिका में इस न्यायालय को यह परीक्षण करना है कि याचिकाकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत उन्मोचन प्रार्थना-पत्र तथा उनके द्वारा दायर पुनरीक्षण पर विचार करते समय विद्वान विचारण न्यायालय अथवा विद्वान पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा आक्षेपित आदेश पारित करते हुए कोई अवैधता अथवा त्रुटि की गई है या नहीं, तथा क्या याचिकाकर्ता विमुक्त किए जाने के अधिकारी थे, जिनके निर्धारण हेतु मापदण्ड द०प्र०स० में ही विनिर्दिष्ट हैं।

28. द०प्र०स० की धारा 239 यह उपबंधित करती है कि अभियुक्त को कब विमुक्त किया जाएगा, जिसका पाठ निम्नवत् है–

> ***"239. अभियुक्त को कब उन्मोचित किया जाएगा:-*** *यदि धारा 173 के अधीन पुलिस रिपोर्ट और उसके साथ भेजी गई दस्तावेजों पर विचार कर लेने पर और अभियुक्त की ऐसी परीक्षा, यदि कोई हो, जैसी मजिस्ट्रेट आवश्यक समझे, कर लेने पर और अभियोजन और अभियुक्त को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात् मजिस्ट्रेट अभियुक्त के विरुद्ध आरोप को निराधार समझता है तो वह उसे उन्मोचित कर देगा और ऐसा करने के अपने कारण लेखबद्ध करेगा।"*

29. उपर्युक्त द०प्र०स० की धारा 239 के अनुसार, यदि मजिस्ट्रेट, पुलिस प्रतिवेदन तथा उसके साथ द०प्र०स० की धारा 173 के अन्तर्गत प्रेषित दस्तावेजों पर विचार करने के

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

पश्चात, तथा अभियुक्त की, यदि कोई हो, ऐसी जाँच करने के उपरान्त जैसा कि वह आवश्यक समझे, और अभियोजन तथा अभियुक्त–दोनों को सुनवाई का अवसर प्रदान करने के पश्चात–यह समाधान करता है कि अभियुक्त के विरुद्ध आरोप आधारहीन हैं, तो वह कारणयुक्त आदेश पारित करते हुए अभियुक्त को विमुक्त करेगा। अतः यह परीक्षण किया जाना है कि अभियोजन द्वारा मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत सामग्री के आधार पर, वर्तमान वाद में अभियुक्त अर्थात् याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध आरोप आधारहीन हैं अथवा नहीं; न कि अभियुक्त की किसी दलील, सामग्री अथवा साक्ष्य के आधार पर, जिन पर विचार केवल विवेचना अथवा साक्ष्य के उपरान्त विचारण के दौरान ही किया जा सकता है।

30. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **तमिलनाडु राज्य बनाम आर० साउंडिरारासु एवं अन्य; (2023) 6 एससीसी 768** के वाद में यह अभिनिर्धारित किया है कि द०प्र०स० की धारा 239 यह उपबंधित करती है कि यदि मजिस्ट्रेट अभियुक्त के विरुद्ध आरोपों को आधारहीन मानता है, तो वह अभियुक्त को विमुक्त करेगा; तथा धारा 239 में प्रयुक्त शब्द "आधारहीन" का अर्थ यह है कि न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत सामग्री से अभियुक्त के विरुद्ध प्रथमदृष्टया कोई मामला नहीं बनता अथवा वह ऐसा मामला स्थापित करने के लिए पर्याप्त नहीं है। यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि इस चरण पर किया जाने वाला अभ्यास केवल पुलिस प्रतिवेदन तथा दस्तावेजों पर विचार करने तक ही सीमित रहेगा, ताकि यह निर्णय किया जा सके कि अभियुक्त के विरुद्ध लगाए गए आरोप "आधारहीन" कहे जा सकते हैं अथवा नहीं। उक्त निर्णय के प्रासंगिक अनुच्छेद 62, 63, 64, 67, 68, 75, 76 एवं 77 निम्नवत् उद्धृत हैं:-

"62. द०प्र०स० की धारा 239 यह उपबंधित करती है कि यदि मजिस्ट्रेट अभियुक्त के विरुद्ध आरोप को आधारहीन मानता है, तो वह अभियुक्त को

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

विमुक्त करेगा। हमारे विचार में, 'आधारहीन' शब्द का अर्थ यह है कि अभियुक्त द्वारा अपराध किए जाने की कोई ऐसी भूमि नहीं है, जिसके आधार पर ऐसा अनुमान लगाया जा सके। धारा 239 में प्रयुक्त 'आधारहीन' शब्द का तात्पर्य यह है कि न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत सामग्री अभियुक्त के विरुद्ध प्रथमदृष्टया मामला स्थापित नहीं करती अथवा ऐसा करने के लिए पर्याप्त नहीं है।

63. *विद्वान लेखक श्री सरकार ने अपनी पुस्तक क्रिमिनल प्रक्रिया संहिता, पंचम संस्करण, पृष्ठ 427 पर यह अभिमत व्यक्त किया है:-*

> *"यह उपबंध धारा 227 के समान है, अंतर केवल इतना है कि मजिस्ट्रेट, यदि आवश्यक समझे, तो अभियुक्त की जाँच कर सकता है, जैसा कि धारा 245 में भी है। मजिस्ट्रेट अभियुक्त को कारण अभिलेखित करते हुए विमुक्त करेगा, यदि (i) धारा 173 में उल्लिखित पुलिस प्रतिवेदन तथा दस्तावेजों पर विचार करने के पश्चात; (ii) अभियुक्त की, यदि आवश्यक हो, जाँच करने के पश्चात; तथा (iii) दोनों पक्षों के तर्क सुनने के पश्चात वह यह समाधान करता है कि अभियुक्त के विरुद्ध आरोप आधारहीन हैं, अर्थात् या तो कोई विधिक साक्ष्य नहीं है अथवा तथ्य किसी भी प्रकार का अपराध नहीं दर्शाते।"*

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

64. *संक्षेप में, इसका अर्थ यह है कि यदि किसी भी अपराध के किए जाने के संबंध में प्रथमदृष्टया कोई मामला स्थापित नहीं होता, तो यह माना जाएगा कि आरोप आधारहीन हैं।*

65. .....

66. .....

67. *अतः, इस न्यायालय द्वारा की गई व्याख्या के अनुसार, "आधारहीन" शब्द का अर्थ यह है कि ऐसा कोई आधार विद्यमान नहीं है, जिसके आधार पर यह अनुमान लगाया जा सके कि अभियुक्त द्वारा कोई अपराध किया गया है।*

68. *इस विषय के उक्त पहलू पर इस न्यायालय द्वारा पश्चिम बंगाल राज्य के विधिक कार्यों के अधीक्षक एवं स्मरणकर्ता बनाम अनिल कुमार भूंजा के वाद में पुनः विचार किया गया है। उक्त वाद में इस न्यायालय द्वारा निम्नवत् अभिव्यक्त किया गया है:-*

> *"इस स्तर पर, मजिस्ट्रेट के समक्ष उपलब्ध सामग्री के आधार पर उत्पन्न होने वाला अत्यन्त प्रबल संदेह भी, जो उसे आरोपित अपराध के गठन करने वाले तथ्यात्मक अवयवों के अस्तित्व के संबंध में एक अनुमानात्मक मत बनाने के लिए प्रेरित करता है, अभियुक्त के विरुद्ध उस अपराध के किए जाने के संबंध में आरोप विरचित किए जाने को न्यायोचित ठहरा सकता है।"*

69. .....

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

Translated Version Not for Legal Use.

70. .....

71. .....

72. .....

73. .....

74. .....

75. अतः द०प्र०स० की धारा 239 एवं 240 के अन्तर्गत शक्ति के प्रयोग का क्षेत्राधिकार एवं परिधि पर्याप्त रूप से स्थापित है। द०प्र०स० की धारा 239 के अन्तर्गत अभियुक्त को विमुक्त करने का दायित्व तब उत्पन्न होता है, जब मजिस्ट्रेट अभियुक्त के विरुद्ध आरोप को "आधारहीन" मानता है। उक्त धारा यह अनिवार्य करती है कि यदि– (i) द०प्र०स० की धारा 173 के अन्तर्गत प्रेषित पुलिस प्रतिवेदन एवं उसके साथ संलग्न दस्तावेजों पर विचार करने के पश्चात, (ii) अभियुक्त की, यदि आवश्यक हो, जाँच करने के उपरान्त, तथा (iii) अभियोजन एवं अभियुक्त–दोनों को सुनवाई का अवसर प्रदान करने के पश्चात मजिस्ट्रेट यह समाधान करता है कि अभियुक्त के विरुद्ध आरोप आधारहीन हैं, अर्थात् या तो कोई विधिक साक्ष्य उपलब्ध नहीं है अथवा तथ्य इस प्रकार के हैं कि कोई अपराध सर्वथा सिद्ध नहीं होता, तो वह कारण अभिलेखित करते हुए अभियुक्त को विमुक्त करेगा। इस स्तर पर न तो सामग्री का विस्तृत मूल्यांकन अपेक्षित है और न ही संभावित प्रतिरक्षाओं पर सूक्ष्म विचार किया जाना है, तथा न ही सामग्री को स्वर्ण-तराजू पर तौलने का कोई अभ्यास किया

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

जाना है; द०प्र०स० की धारा 239/240 के स्तर पर एकमात्र विचारणीय प्रश्न यह है कि आरोप अथवा अभियोग "आधारहीन" है अथवा नहीं।

76. *यह स्तर न तो समस्त सामग्री के गुण-दोष तौलने का है और न ही अभियोजन द्वारा प्रस्तुत सामग्री को छानने का- इस स्तर पर किया जाने वाला अभ्यास केवल पुलिस प्रतिवेदन तथा दस्तावेजों पर विचार करने तक ही सीमित रहेगा, ताकि यह निर्णय किया जा सके कि अभियुक्त के विरुद्ध लगाए गए आरोप "आधारहीन" कहे जा सकते हैं अथवा नहीं।*

77. *"आधार" शब्द, ब्लैक्स लॉ डिक्शनरी के अनुसार, नींव अथवा आधार को दर्शाता है और आपराधिक वाद में अभियोजन के संदर्भ में इसका तात्पर्य अभियुक्त के विरुद्ध आरोप स्थापित करने का आधार अथवा साक्ष्य की ग्राह्यता की नींव से है। इस परिप्रेक्ष्य में "आधारहीन" शब्द का आशय यह होगा कि साक्ष्य में कोई आधार अथवा नींव विद्यमान नहीं है। अतः यह परीक्षण, जो यह निर्धारित करने हेतु लागू किया जा सकता है कि आरोप को आधारहीन माना जाए अथवा नहीं, यह है कि यदि उपलब्ध सामग्री का प्रतिवाद न भी किया जाए, तब भी वह किसी प्रकार का कोई मामला सर्वथा स्थापित न कर सके।*

31. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **कर्नाटक राज्य बनाम एम० आर० हिरेमठ; (2019) 7 एससीसी 515** के वाद में यह अभिनिर्धारित किया है कि यह विधि का स्थापित सिद्धान्त है कि उन्मोचन प्रार्थना-पत्र पर विचार किए जाने के चरण पर न्यायालय को इस मान्यता पर अग्रसर होना चाहिए कि अभियोजन द्वारा अभिलेख पर रखी गई सामग्री सत्य है तथा उक्त

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

Translated Version. Not for Legal Use

सामग्री का मूल्यांकन इस उद्देश्य से किया जाना चाहिए कि क्या उस सामग्री से, उसके प्रत्यक्ष अर्थ में, ऐसे तथ्यों का प्रकटीकरण होता है, जो आरोपित अपराध के गठन हेतु आवश्यक अवयवों के अस्तित्व को दर्शाते हैं। उक्त निर्णय का प्रासंगिक अनुच्छेद 25 निम्नवत् उद्धृत है:-

*"**25.** उच्च न्यायालय को इस तथ्य के प्रति सजग होना चाहिए था कि विचारण न्यायालय द०प्र०स० की धारा 239 के उपबंधों के अन्तर्गत प्रस्तुत उन्मोचन प्रार्थना-पत्र पर विचार कर रहा था। इस अधिकारिता के प्रयोग को नियंत्रित करने वाले मानदण्डों को इस न्यायालय के अनेक निर्णयों में प्रतिपादित किया जा चुका है। यह विधि का स्थापित सिद्धान्त है कि उन्मोचन प्रार्थना-पत्र पर विचार किए जाने के चरण पर न्यायालय को इस मान्यता पर अग्रसर होना चाहिए कि अभियोजन द्वारा अभिलेख पर रखी गई सामग्री सत्य है तथा उस सामग्री का मूल्यांकन इस उद्देश्य से किया जाना चाहिए कि क्या उस सामग्री से, उसके प्रत्यक्ष मूल्य में, ऐसे तथ्यों का प्रकटीकरण होता है, जो आरोपित अपराध के गठन हेतु आवश्यक अवयवों के अस्तित्व को दर्शाते हैं। तमिलनाडु राज्य बनाम एन० सुरेश राजन के वाद में, इस विषय पर पूर्व निर्णयों की ओर दृष्टिपात करते हुए, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया:*

> *"29. ... इस स्तर पर सामग्री के प्रमाणिक मूल्य पर विचार किया जाना है और न्यायालय से यह अपेक्षा नहीं की जाती कि वह विषय में गहराई से प्रवेश करे तथा यह निष्कर्ष निकाले कि सामग्री दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त नहीं है। हमारे मत में, इस चरण पर यह विचारणीय है कि क्या यह अनुमान लगाने का कोई आधार विद्यमान है कि अपराध घटित*

Translated Version Not for Legal Use

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

हुआ है, न कि यह कि अभियुक्त को दोषसिद्ध ठहराने का कोई आधार बनता है। अन्य शब्दों में, यदि न्यायालय यह समाधान करता है कि अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के प्रमाणिक मूल्य के आधार पर अभियुक्त द्वारा अपराध किए जाने की संभावना है, तो वह आरोप विरचित कर सकता है; यद्यपि दोषसिद्धि के लिए न्यायालय को यह निष्कर्ष निकालना होता है कि अभियुक्त द्वारा अपराध किया गया है। विधि इस स्तर पर लघु विचारण की अनुमति नहीं देती।"

32. प्राथमिकी में आरोप यह हैं कि प्रतिवादी संख्या-2, स्व० सन्तराम की विधिवत पत्नी है तथा उनसे एक पुत्र रोहित और एक पुत्री दीपा उत्पन्न हुए। याचिकाकर्ता संख्या-1 भगवन देवी, जो प्रेमचन्द की पत्नी है, तथा याचिकाकर्ता संख्या-2 संगीता, जो प्रेमचन्द की पुत्री है, ने परिवादी के पति स्व० सन्तराम की संपत्तियों को हड़पने के आशय से, स्वयं को क्रमशः स्व० सन्तराम की पत्नी एवं पुत्री दर्शाते हुए, दिनांक 11.12.2008 को परिवार रजिस्टर में अपने नाम दर्ज करा लिए तथा दिनांक 01.11.2008 को याचिकाकर्ता संख्या-1 भगवन देवी के नाम एक वसीयत विलेख भी निष्पादित करा लिया। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अभिलेखित निष्कर्षों के अनुसार, याचिकाकर्ता संख्या-1 ने परिवार रजिस्टर की एक प्रति अभिलेख पर प्रस्तुत की है, जिसमें भगवन देवी को सन्तराम की पत्नी तथा संगीता को सन्तराम की पुत्री दर्शाया गया है। उक्त परिवार रजिस्टर में प्रतिवादी संख्या-2 श्रीमती कमला देवी को प्रथम पत्नी तथा रोहित एवं दीपा को क्रमशः पुत्र एवं पुत्री के रूप में भी दर्शाया गया है। प्रतिवादी संख्या-2 द्वारा मतदाता सूची की एक प्रति भी अभिलेख पर प्रस्तुत की गई है, जिसमें भगवन देवी को प्रेमचन्द की पत्नी दर्शाया गया है, जिसे याचिकाकर्ताओं द्वारा इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया है। अतः अभिलेख पर उपलब्ध दस्तावेजों के

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

Translated Version: Not for Legal Use

अनुसार, याचिकाकर्ता संख्या-1 भगवन देवी स्व० प्रेमचन्द की पत्नी है तथा याचिकाकर्ता संख्या-2 संगीता स्व० प्रेमचन्द की पुत्री है। इस तथ्य का याचिकाकर्ताओं द्वारा इस याचिका में भी खण्डन नहीं किया गया है, अपितु वे स्वयं को क्रमशः स्व० सन्तराम की पत्नी एवं पुत्री होने का दावा कर रहे हैं। द०प्र०स० की धारा 239 के अन्तर्गत विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत प्रार्थना-पत्र–जिसकी प्रति इस याचिका के अभिलेख पर परिशिष्ट संख्या-8 के रूप में संलग्न है–में भी इस तथ्य का कोई प्रतिवाद नहीं किया गया है। यह भी प्रकटीकृत नहीं किया गया है कि याचिकाकर्ता संख्या-1 का स्व० सन्तराम से विवाह कब हुआ तथा यदि हुआ, तो क्या वह विवाह स्व० प्रेमचन्द के जीवनकाल में हुआ अथवा उसके पश्चात अथवा तलाक के उपरान्त हुआ। यह भी स्पष्ट नहीं किया गया है कि वैध दत्तक ग्रहण के अभाव में याचिकाकर्ता संख्या-2 संगीता को स्व० सन्तराम की पुत्री किस प्रकार दर्शाया जा सकता है।

33. उन्मोचन प्रार्थना-पत्र में यह कथन किया गया है कि याचिकाकर्ताओं के नाम वर्ष 2008 में परिवार रजिस्टर में दर्ज करा दिए गए थे तथा प्रतिवादी संख्या-2 द्वारा इस पर कोई आपत्ति नहीं की गई थी; तथापि यह प्रकटीकृत नहीं किया गया है कि प्रतिवादी संख्या-2, जो कथित घटना की तिथि पर तथा उसके पश्चात भी स्वीकार्य रूप से दिल्ली में निवास कर रही थी, को स्व० सन्तराम के परिवार रजिस्टर में याचिकाकर्ताओं के नाम दर्ज किए जाने की कोई जानकारी थी अथवा उसे इस संबंध में कोई अवसर प्रदान किया गया था। उन्मोचन प्रार्थना-पत्र के अनुच्छेद 8 में विशेष रूप से यह उल्लेख किया गया है कि स्व० सन्तराम का विवाह उसके बाल्यावस्था में ग्राम भीटौरा, थाना जलालपुर, जनपद अम्बेडकर नगर में हुआ था तथा प्रतिवादी संख्या-2 कमला देवी भी स्व० सन्तराम की दूसरी पत्नी के रूप में रहती थी, किन्तु मतभेद उत्पन्न होने के कारण वह उसे छोड़कर दिल्ली में किसी

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

अन्य व्यक्ति के साथ रहने लगी; तत्पश्चात स्व० सन्तराम ने भगवन देवी से विवाह किया तथा संगीता को दत्तक ग्रहण कर उनके नाम परिवार रजिस्टर में दर्ज करा दिए। यद्यपि अनुच्छेद 6 में यह उल्लेख है कि स्व० सन्तराम ने परिवार रजिस्टर में नाम दर्ज कराए, किन्तु इस संबंध में कोई दस्तावेज अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं किया गया है तथा यह भी प्रकटीकृत नहीं किया गया है कि उसने याचिकाकर्ता संख्या-1 भगवन देवी से कब विवाह किया तथा संगीता को कब और किस प्रकार अपनी पुत्री के रूप में दत्तक ग्रहण किया और क्या उक्त दत्तक ग्रहण विधि के अनुसार किया गया था अथवा नहीं। जबकि हिन्दू विधि के अनुसार, प्रथम विवाह के अस्तित्व एवं प्रथम पत्नी के जीवनकाल में कोई व्यक्ति द्वितीय विवाह नहीं कर सकता और तदनुसार कोई स्त्री विधिवत विवाह नहीं कर सकती; अतः यदि विवाह हुआ भी हो, तो दूसरी पत्नी विधिवत पत्नी नहीं मानी जा सकती और न ही उसकी पुत्री उस व्यक्ति की विधिक पुत्री मानी जा सकती है। इस प्रकार, याचिकाकर्ता संख्या-1 एवं 2 के नाम भी विधिसम्मत रूप से परिवार रजिस्टर में दर्ज नहीं किए जा सकते थे, तथापि याचिकाकर्ताओं ने जानबूझकर स्वयं को क्रमशः पत्नी एवं पुत्री दर्शाते हुए अपने नाम दर्ज करा लिए।

34. यह भी तर्क प्रस्तुत किया गया है कि स्व० सन्तराम ने दिनांक 08.06.2010 को तहसील टाण्डा में स्थित एक मकान का पंजीकृत विक्रय विलेख याचिकाकर्ता संख्या-1 भगवन देवी के पक्ष में निष्पादित किया था। यह तथ्य भी परिवार रजिस्टर में नाम प्रविष्टि तथा दिनांक 01.11.2008 को भगवन देवी के पक्ष में स्व० सन्तराम द्वारा वसीयत निष्पादित किए जाने के संबंध में संदेह उत्पन्न करता है, क्योंकि यदि उसकी संपत्तियों के संबंध में पूर्व में ही भगवन देवी के पक्ष में वसीयत निष्पादित की जा चुकी थी, तो तत्पश्चात याचिकाकर्ता

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

संख्या-1 के पक्ष में मकान का विक्रय विलेख निष्पादित किए जाने तथा उस पर मुद्रांक शुल्क अदा किए जाने की आवश्यकता ही नहीं थी।

35. इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत प्रतिज्ञापत्र में यह भी कथन किया गया है कि स्व० सन्तराम ने किसी भी व्यक्ति के पक्ष में कोई वसीयत विलेख निष्पादित नहीं किया था तथा याचिकाकर्ता संख्या-1 को स्व० सन्तराम की दूसरी पत्नी के रूप में प्रस्तुत करना सर्वथा असत्य है। अतः याचिकाकर्ता न केवल षड्यंत्र के माध्यम से स्व० सन्तराम की संपत्ति हड़पने का प्रयास कर रहे हैं, बल्कि प्रतिवादी संख्या-2 के पति स्व० सन्तराम के चरित्र को भी कलंकित कर रहे हैं। यह भी अभिलिखित किया गया है कि प्रतिवादी संख्या-2 का नाम स्व० सन्तराम की सेवा पुस्तिका में उसकी पत्नी के रूप में दर्ज है और तदनुसार उसके पति की मृत्यु के पश्चात उसे पेंशन प्राप्त हो रही है। प्रतिज्ञापत्र में किए गए इन कथनों का याचिकाकर्ताओं द्वारा प्रत्युत्तर प्रतिज्ञापत्र में कोई विशिष्ट खण्डन नहीं किया गया है। प्रत्युत्तर प्रतिज्ञापत्र से यह भी स्पष्ट है कि प्रतिज्ञापत्र के अनुच्छेद 18 के पश्चात के अनुच्छेदों का कोई उत्तर नहीं दिया गया है।

36. यह भी स्पष्ट है कि अभियोजन द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत आरोपों एवं सामग्री–जिनके आधार पर अंतिम रिपोर्ट अस्वीकृत करते हुए संज्ञान लिया गया तथा याचिकाकर्ताओं को समन निर्गत किए गए–का न तो खण्डन किया गया है और न ही कोई विशिष्ट प्रत्याख्यान प्रस्तुत किया गया है, जिसके दृष्टिगत आरोपित अपराध प्रथमदृष्टया सिद्ध होते हैं।

37. विद्वान विचारण न्यायालय तथा विद्वान पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा अभियोजन की अभिलेखीय सामग्री एवं याचिकाकर्ताओं द्वारा उठाए गए आधारों पर विचार करते हुए

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

आक्षेपित आदेश विधि के अनुरूप पारित किए गए हैं। इस न्यायालय को आक्षेपित आदेशों में कोई ऐसी अवैधता अथवा त्रुटि दृष्टिगोचर नहीं होती, जो इस न्यायालय द्वारा किसी प्रकार के हस्तक्षेप की अपेक्षा उत्पन्न करे। यह याचिका भ्रांत है और इसमें गुणवत्ता का अभाव है।

38. तदनुसार, याचिका **निरस्त की जाती है।**

(न्यायमूर्ति राजनीश कुमार)

आदेश दिनांक :- 27.08.2025

सौरभ

Translated Version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।